रामानन्दीय सम्प्रदाय की सामाजिकता: एक विश्लेषण

आदित्य आंगिरस

हिन्दी प्रवक्ता

वी वी बी आई एस एण्ड आई एस

(पंजाब विश्वविद्यालय,चण्डीगढ.)

साधु आश्रम,ऊना रोड

होशियारपुर

हिन्दी साहित्य का पूर्व मध्य काल (संवत१३७५ से ले कर संवत १७०० तक) भक्तिकाल या हिन्दी साहित्य के स्वर्णकाल के नाम से जाना जाता हैं। इस काल के भक्त कवियों में जहां उस परम तत्त्व को सृष्टि के परम तत्त्व के रूप मे जानने का प्रयास किया वहीं दूसरी ओर उन्होंने भक्ति के माध्यम से सामाजिक समानता एवं सामाजिक समरसता को भी भारतीय समाज में प्रतिष्ठापित करने का प्रयास किया जो तत्कालीन प्रचलित लिड्ग भेद, धर्म भेद, जातिगत भेद पर आधारित न होकर प्रचलित साधना पद्धतियों से भिन्न था एवं यह इस सर्वमान्य तथ्य पर आधारित था कि ईश्वरीय कृपा का पात्र कोई भी व्यक्ति हो सकता है यदि वह शुद्ध चित्त हो कर ईश्वर का स्मरण भजन कीर्तन आदि करता है। समस्त सन्त एवं सूफ़ी कवियों द्वारा रचित साहित्य कमोबेश इसी तथ्य को प्रदर्शित करने का प्र्यास करता है औरयह बात भी महत्त्वपूर्ण है इस भारतीय कवि मनीषा ने सभी को उस मानवीय धरातल पर लाने का प्रयत्न किया जिसकी भाव-भूमि सभी के लिये एक समान थी, जिस में जातिगत, धर्मगत और लिड.गत कोई बन्धन नहीं था। सन्त काव्य की यह स्वयं में विशेषता है कि वह एक ऐसे प्रेममार्गीय समाज की कल्पना करता है जो समस्त धर्मगत, जातिगत रूढियों एवं बंधनों से मुक्त है और जो प्रत्येक मनुष्य को मानव को मानव मानने के लिये बाध्य करता है। रामानन्द का नाम इसी सन्त परम्परा के चिन्तकों एवं कवियों में अग्रगण्य माना जाता है क्योंकि रामानन्द ने न केवल इस सामाजिक सत्य को न केवल भावात्मक रूप में देखा, समझा और स्वीकार किया अपितु उसमें आवश्यक बदलाव करने का प्रयास भी किया ताकि मनुष्य अपने मनुष्यत्च में प्रतिष्ठित हो कर उस परम तत्त्व का साक्षात्कार कर सके जिस का वह वास्तविक अधिकारी है। यद्यपि रामानन्द के भाव नैर्मल्य की बानगी देखते बनती है फ़िर भी कई चिन्तक रामानन्द के काव्य की संप्रेषणीयता पर भिन्न रूपेण प्रश्न खडा कर देते है जो बहुधा में तर्कसंगत नहीं होते। इसका तर्क अयह हो सकता है कि भक्ति का क्षेत्र जहां हृदय है वहां तर्क की उपस्थिति अनपेक्षणीय है। यहां यह स्पष्ट कर देना अधिक सार्थक होगा कि रामानन्द सर्वप्रथम, मानव को मानव के रूप में देखने में अधिक विश्वास करते हैं जिसमें श्रद्धा आस्था आदि आवश्यक मानवीय गुण विद्यमान है। रामानन्द की यह अवधारणा भारतीय समाज में प्रचलित व्यक्तिगत, जाति अथवा पंथगत मानवीय परिकल्पना से नितान्त भिन्न है जो मनुष में भेद उत्त्पन्न करने में विश्वास करता है। यह बात इस लिये भी कहनी समीचीन होगी क्योंकि रामानन्द शायद महाभारत की उस उक्ति में अधिक विश्वास करते थे जो मनुष्य मात्र को उपदेश करती हुई यह बताती है कि "नहि मानुषात श्रेष्ठतरं हि किंचित" कि मनुष्य से बेहतर इस धरा धाम पर कुछ नहीं है।

स्वामी रामानंद का साक्षात्कार बहुधा में केवल धर्मगुरु के रूप में किया जाता है परन्तु उनकी वाणी का जहां केवल आध्यात्मिक रस ही आस्वाद्य होना चाहिए, वहीं दूसरी ओर विद्वानों ने नाना रूप में उन वाणियों का अध्ययन और उपयोग अपने प्रतिभानुसार किया है उदाहरणत: वे स्वामी रामानंद का समाजसुधारक पक्ष, सर्वधर्म समन्वयात्मक रूप में, हिन्दू मुस्लिम ऐक्य विधायक के रूप में, विशेष सम्प्रदाय के प्रतिष्ठाता के रूप में और वेदांत व्याख्याता, दार्शनिक आदि के रूप में, एक सिद्ध कवि के रूप में आदि के रूप में जहां देखने के पक्षपाती है । यद्यपि स्वामी रामानंद के पहले भी कई कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से मानवीयता का चित्र अपने काव्य के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया परन्तु भक्ति युग में प्रचलित साधनाओं के सभी रूपों में सबसे प्रमुख प्रेमाभक्ति साधना का ही रहा है जिसे स्वामी रामानंद ने अपने काव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया और इसी भाव भक्ति ने भारतीय साहित्य को दूर दूर तक प्रभावित किया जिसके परिणाम स्वरूप जहां एक ओर कबीरआदि का काव्य अस्तित्व में आया तो दूसरी ओर वहीं तुलसी काव्य का प्रेरणा स्रोत भी भी आचर्य रामानन्द बने। स्वामी रामानंद ने भगवान की दृष्टि में सभी के समान होने के सिद्धान्त को फिर दोहराया जो कि जाति, लिड्ग भेद, रंगभेद और किसी भी प्रकार के नस्लवाद से दूर है । स्वामी रामानंद की भक्ति भावना इस तथ्य से जुडी है कि मनुष्य अपने मनुष्य भाव में स्थित हो कर अपने स्वत्व को पाने का प्रयत्न करे जो कि मनुष्य जीवन का वास्तविक लक्ष्य है। भक्तिपथ में भक्ति के द्वारा प्राचीन भारतीय जीवन मूल्यों में प्राण स्पंदन देने वालों में स्वामी रामानंद प्रमुख हैं जिसमें प्रत्येक मनुष्य समान है एवं प्रत्येक को वे सभी अधिकार प्राप्त हैं जिनकी हम विभिन्न संविधानों के माध्यम से कल्पना कर सकते हैं।

स्वामी रामानंद अनेकानेक साधनाओं के अन्तर्विरोध के युग में जन्मे थे जहां संपूर्ण भारतीय समाज सिद्ध नाथ, बौद्ध जैन परम्परा, शिया-सुन्नी संप्रदाय आदि के रूप में अपनी अपनी प्रचलित धार्मिक साधनाओं में व्यस्त थे। इस समय के समाज के लिये वे सभी कृछ्र साधनाऐं सही रूप में मानी जाती थी जिसमें धार्मिक आडम्बर भी प्रमुख रूप से विद्यमान थे जिनका आधार कोई तर्क युक्तियुक्त नही था। स्वामी रामानंद के व्यक्तित्व को सभी अन्तर्विरोधों ने प्रभावित किया, इस लिये स्वामी रामानंद ने आध्यात्म रामायण के माध्यम से एक कठोर समन्वयवादी दृष्टिकोण अपनाया जो मनुष्य को मनुष्य रूप में देखने का पक्षपाती रहा है। उनके लिये भगवद्-प्रेम के सभी अधिकारी हैं और मनुष्य जन्म में ही यह तभी संभव है यदि हम व्यर्थ की प्रपंच साधनाओं में न पडे.।यह कहना यहां उचित होगा कि मनुष्य के पास केवल दो ही विकल्प हैं प्रथम यह कि वह व्यर्थ के प्रपंच में पड. कर साधनाओं में अपना समय व्यतीत करदे अथवा वह अपनी भाव भूमि को शुद्ध एवं निर्मल कर आपने भीतर के उस तत्त्व को देखने का प्रयास करे जिसे औपनिषदिक साहित्य ने परम पुरुष माना है और जो मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य माना गया है एवं जिसके दर्शन के पश्चात इस संसार में प्राप्त करने के लिये कुछ भी शेष नहीं रह जाता है। वेदान्त एवं योग के शब्दों में इसी अवस्था को संभवत: “तदा द्रष्टु स्वरूपे अवस्थानम्” कहा गया है। ऐसी अवस्था में योगी आत्मरमण करता हुआ समाज के लिये स्वस्थ परम्परा और मर्यादाओं का निर्माण करतादूसरों का प्रेरणा स्रोत बनता है एवं वह किसी व्यक्ति के किसी भी प्रकार के अधिकार का हनन नहीं करता अपितु वह प्रत्येक मनुष्य को श्रेष्ठतर मनुष्यता के मार्ग पर अग्रसर होने का प्रेरणा देता है और समाज के प्रत्येक जीव को आत्मकल्याण के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है जिसके परिणाम स्वरूप एव स्वस्थ समाज का गठन हो सके।

यह तो बात निश्चित है कि स्वामी रामानंद को मध्यकालीन भक्ति आंदोलन का महान संत माना जाता है। उन्होंने रामभक्ति की धारा को समाज के निचले तबके तक पहुंचाया। उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों ने भारतीय धर्म, दर्शन, साहित्य और संस्कृति के विकास में भागवत धर्म तथा वैष्णव भक्ति से संबद्ध वैचारिक क्रांति की महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। वैष्णव भक्ति के महान संतों की उसी श्रेष्ठ परंपरा में आज से लगभग सात सौ नौ वर्ष पूर्व स्वामी रामानंद का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने श्री सीताजी द्वारा पृथ्वी पर प्रवर्तित विशिष्टाद्वैत (राममय जगत की भावधारा) सिद्धांत तथा रामभक्ति की धारा को मध्यकाल में अनुपम तीव्रता प्रदान की। उन्हें भारतीय साहित्य में उत्तर भारत में आधुनिक भक्ति मार्ग का प्रचार एवं प्रसार करने वाला और वैष्णव साधना के मूल प्रवर्त्तक के रूप में स्वीकार किया जाता है। एक प्रसिद्ध लोकोक्ति के अनुसार-"भक्ति द्रविड़ ऊपजी, लायो रामानंद।" स्वामी रामानंद ने भक्ति मार्ग का प्रचार करने के लिए देश भर की यात्राएं की। वे पुरी औऱ [दक्षिण भारत](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%A6%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BF%E0%A4%A3_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4) के कई धर्मस्थानों पर गये और रामभक्ति का प्रचार किया। पहले उन्हें [स्वामी रामानुज](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%80_%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%A8%E0%A5%81%E0%A4%9C&action=edit&redlink=1) का अनुयाय़ी माना जाता था लेकिन [श्री-सम्प्रदाय](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B6%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%80%E0%A4%B8%E0%A4%AE%E0%A5%8D%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%AF&action=edit&redlink=1) का आचार्य होने के बावजूद उन्होंने अपनी उपासना पद्धति में ऱाम और सीता को वरीयता दी। उन्हें हीं अपनी साधना का उपास्य बनाया। राम भक्ति की पावन धारा को हिमालय की पावन ऊंचाईयों से उतारकर [स्वामी रामानंद](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%80_%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%82%E0%A4%A6) ने गरीबों और वंचितों की झोपड़ी तक पहुंचाया. वे भक्ति मार्ग के ऐसे सोपान थे जिन्होंने वैष्णव भक्ति साधना को नया आयाम दिया। उनकी पवित्र चरण पादुकायें आज भी श्रीमठ, काशी में सुरक्षित हैं, जो करोड़ों रामानंदियों की आस्था का केन्द्र है। स्वामीजी ने भक्ति के प्रचार एवं प्रसार में संस्कृत की जगह लोकभाषा को प्राथमिकता दी ताकि साधारण से साधारण जन उन्हें पढ कर उस मार्ग्॒ का अनुसरण करे ताकि वह मनुष्य अपने जीवन में उस श्रेष्ठता का अनुभव कर सके जो मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। उन्होंने कई पुस्तकों की रचना की जिसमें आनंद भाष्य पर टीका एवं [वैष्णवमताब्ज भास्कर](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B5%E0%A5%88%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%A3%E0%A4%B5%E0%A4%AE%E0%A4%A4%E0%A4%BE%E0%A4%AC%E0%A5%8D%E0%A4%9C_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%95%E0%A4%B0&action=edit&redlink=1) साहित्य के क्षेत्र में उनकी प्रमुख रचनाऐं है।स्वामी रामानन्दाचार्य द्वारा विरचित पुस्तकों की सूची इस प्रकार है:

(१) [वैष्णवमताब्ज भास्कर](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B5%E0%A5%88%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%A3%E0%A4%B5%E0%A4%AE%E0%A4%A4%E0%A4%BE%E0%A4%AC%E0%A5%8D%E0%A4%9C_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%95%E0%A4%B0&action=edit&redlink=1): (संस्कृत),
(२) [श्रीरामार्चनपद्धतिः](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B6%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%80%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%9A%E0%A4%A8%E0%A4%AA%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%A7%E0%A4%A4%E0%A4%BF%E0%A4%83&action=edit&redlink=1) (संस्कृत),
(३) [रामरक्षास्तोत्र](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%B0%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A5%8B%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0) (हिन्दी),
(४) [सिद्धान्तपटल](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B8%E0%A4%BF%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%A7%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A4%AA%E0%A4%9F%E0%A4%B2&action=edit&redlink=1) (हिन्दी),
(५) [ज्ञानलीला](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%9C%E0%A5%8D%E0%A4%9E%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%B2%E0%A5%80%E0%A4%B2%E0%A4%BE&action=edit&redlink=1) (हिन्दी),
(६) [ज्ञानतिलक](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%9C%E0%A5%8D%E0%A4%9E%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%A4%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A4%95&action=edit&redlink=1) (हिन्दी),
(७) [योगचिन्तामणि](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%97%E0%A4%9A%E0%A4%BF%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%A3%E0%A4%BF&action=edit&redlink=1) (हिन्दी)
(8) [सतनामी पन्थ](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B8%E0%A4%A4%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%80_%E0%A4%AA%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A5&action=edit&redlink=1) (हिन्दी)

महान और कालजयी कविता वही होती है जहाँ मनुष्य, उसके अस्तित्व और अस्मिता के समक्ष संकट और मानवता के अपमान करने वाले तत्वों के समक्ष प्रश्नचिन्ह खड़ा करती है | यही नहीं महान कविता मानवीय एकता और सामाजिक समरसता और समन्वयता की भावना को विस्तार देती है, लोक जागरण की पक्षधरता के स्वर को मुखर करती है| इसमें कोई संशय नहीं कि मध्युगीन भक्त कवियों की वाणी अखिल मानवता के प्रति इस दायित्व का बखूबी निर्वहण करती हैं | वस्तुत: मध्ययुगीन संत काव्य तत्कालीन सामंतवादी और रुढ़िवादी परिवेश में मानवतावादी चेतना की एक प्रखर अभिव्यक्ति है जिसने समस्त मनुष्य जाति को एक बार पुन: जीवन के उस सत्य के प्रति जागरूक करने का प्रयास किया जो मनुष्य जीवन का श्रेष्ठतम लक्ष्य है। स्वामी रामानन्द का काव्य उस सांस्कृतिक जागरण की सशक्त अभिव्यक्ति है, जो गहरे मानवीय सरोकारों से उपजी है और जो सार्वभौमिक मानव मूल्यों को प्रतिष्ठापित करता है। सार्वभौमिक मूल्य से तात्पर्य उन मूल्यों से है जिनकी प्रासंगिकता प्रत्येक भौगोलिक परिवेश और अतीत, वर्तमान एवं भविष्य के कालखंड में बनी रहे| लेकिन यहाँ प्रासंगिकता से मतलब मात्र इतना नहीं है कि वह मूल्य वर्तमान या परिवेश विशेष की परिस्थितियों के अनुकूल हो या हमारे विचारों को समर्थन करता हो, बल्कि प्रासंगिकता तब भी होती है जब वह मूल्य वर्तमान या परिवेश विशेष की परिस्थितियों को चुनौती भी देता है और उन्हें नवीन सन्दर्भों में हमारे संस्कारों को परिष्कृत भी करता है|

स्वामी रामानन्द के काव्य में सार्वभौमिक मानव मूल्यों कीअभिव्यक्ति निम्न रूपों में हुई है:-

  मानव प्रेम के रूप में,

  लोकधर्म के रूप में,

  आत्यन्तिक मानव कल्याण के रूप में,

  सामाजिक विषमता और धार्मिक आडम्बरों के खंडन के रूप मे,

  अखंड प्राकृतिक सत्ता के प्रति गहरे लगाव के रूप में |

मध्ययुगीन धर्म साधना के केंद्र में स्वामी जी की स्थिति चतुष्पथ के दीप-स्तंभ जैसी है जो सभी ओर प्रकाश करता है। उन्होंने अभूतपूर्व सामाजिक क्रांति का श्रीगणेश करके बड़ी जीवटता से भारतीय समाज और संस्कृति के उन मूल्यों की रक्षा की जो पूर्व मध्यकालीन भारतीय संक्रमण कल में बहुधा में आडम्बरों के रूप में बदल रहे थे। उन्हीं के चलते उत्तर भारतीय तीर्थ स्थलों की रक्षा और वहां सांस्कृतिक केंद्रों की स्थापना का काम संभव हो सका। उस युग की परिस्थितियों के अनुसार, वैरागिनी साधु समाज को अस्त्र-शस्र से सज्जित सेना के रूप में संगठित कर तीर्थ-व्रत की रक्षा के लिए, धर्म का एक सक्रिय मूर्तिमान स्वरूप खड़ा किया क्योंकि यदि हम भारतीय इतिहास पर दृष्टिपात करें तो मध्यकालीन ऐतिहासिक कालखण्ड भारतीय इतिहास का एक ऐसा काल खण्ड है जिसमें विदेशी अक्रमणोंके साथ साथ भारतीय मानसिकता में भी परिवर्तन आया। अत: तीर्थस्थानों से लेकर गांव-गांव में वैरागी साधुओं ने अखाड़े स्थापित किए ताकि मूल्य संक्रमण काल में भारतीय मानसिकता पथ भ्रट न हो सके। मूल्य ह्रास की इस विषम अवस्था में भी संपूर्ण संसार में रामानंद संप्रदाय के सर्वाधित मठ, संत, रामगुणगान, अखंड रामनाथ संकीर्तन आज भी व्यवस्थित हैं और सर्वत्र आध्यामिक आलोक प्रसारित कर रहे हैं। वैष्णवों के बावन द्वारों में सर्वाधिक सैंतीस द्वारे इसी संप्रदाय से जुड़े हैं।इसके अतिरिक्त इसकी शाखाएं, प्रशाखाएं और अवान्तर शाखाएं जैसे- [रामस्नेही](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%A8%E0%A5%87%E0%A4%B9%E0%A5%80&action=edit&redlink=1), [कबीरदासी](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%95%E0%A4%AC%E0%A5%80%E0%A4%B0%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8%E0%A5%80&action=edit&redlink=1), [घीसापंथी](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%98%E0%A5%80%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%AA%E0%A4%82%E0%A4%A5%E0%A5%80&action=edit&redlink=1), [दादूपंथ](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%A6%E0%A5%82%E0%A4%AA%E0%A4%82%E0%A4%A5&action=edit&redlink=1) आदि नामों से इस संप्रदाय की मूलभावना की ही संवाहिका बनी हैं। यह स्वामी रामानंद के ही व्यक्तित्व का प्रभाव था कि हिंदू-मुस्लिम वैमनस्य, शैव-वैष्णव विवाद, वर्ण-विद्वेष, मत-मतांतर का झगड़ा और परस्पर सामाजिक कटुता काफ़ी सीमा तक कम हो गई। उनके यौगिक शक्ति के चमत्कार से प्रभावित होकर तत्कालीन मुगल शासक [मोहम्मद तुगलक](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%AE%E0%A5%8B%E0%A4%B9%E0%A4%AE%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A4%A6_%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%97%E0%A4%B2%E0%A4%95&action=edit&redlink=1) संत कबीरदास के माध्यम से स्वामी रामानंदाचार्य की शरण में आया और हिंदुओं पर लगे समस्त प्रतिबंधों और जजिया जैसे कर को हटाने का उसने निर्देश जारी किया। बलपूर्वक इस्लाम धर्म में दीक्षित हिंदुओं को फिर से उनके मूल धर्म में वापस लाने के लिए परावर्तन संस्कार का महान कार्य सर्वप्रथम स्वामी रामानंदाचार्च ने ही प्रारंभ किया। इतिहास साक्षी है कि [अयोध्या](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%85%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%A7%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE) के राजा [हरिसिंह](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B9%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%B8%E0%A4%BF%E0%A4%82%E0%A4%B9&action=edit&redlink=1) के नेतृत्व में चौंतीस हजार राजपूतों को एक ही मंच से स्वामीजी ने स्वधर्म अपनाने के लिए प्रेरित किया था। ऐसे महान संत, परम विचारक, समन्वयी महात्मा का प्रादुर्भाव [तीर्थराज प्रयाग](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%A4%E0%A5%80%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%A5%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%9C_%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%97&action=edit&redlink=1) में एक [कान्यकुब्ज ब्राह्मण](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%95%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%95%E0%A5%81%E0%A4%AC%E0%A5%8D%E0%A4%9C_%E0%A4%AC%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%B9%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A4%A3) परिवार में हुआ था। जन्मतिथि को लेकर मतभेद होने के बावजूद रामानंद संप्रदाय में मान्यता है कि आद्य जगद्गुरू का प्राकट्य माघ कृष्ण सप्तमी संवत् १३५६ को हुआ था। इनके पिता का नाम पंडित पुण्य सदन शर्मा और माता का नाम सुशीला देवी था। धार्मिक संस्कारों से संपन्न पिता ने रामानंद को काशी के श्रीमठ में गुरू राघवानंद के सानिध्य में शिक्षा ग्रहण के लिए भेजा. कुशाग्रबुद्धि के रामानंद ने अल्पकाल में ही सभी शास्त्रों, पुराणों का अध्ययन कर प्रवीणता प्राप्त कर ली। गुरू राघवानंद और माता-पिता के दबाव के बावजूद उन्होंने गृहस्थाश्रम स्वीकार नहीं किया और आजीवन विरक्त रहने का संकल्प लिया। ऐसे में स्वामी रामानंद को [रामतारक मंत्र](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%A4%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%95_%E0%A4%AE%E0%A4%82%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0) की दीक्षा प्रदान की। रामानंद ने श्रीमठ की गुह्य साधनास्थली में प्रविष्ट हो राममंत्र का अनुष्ठान तथा अन्यान्य तांत्रिक साधनाओं का प्रयोग करते हुए घोर तपश्चर्या की। योगमार्ग की तमाम गुत्थियों को सुलझाते हुए उन्होंने अष्टांग योग की साधना पूर्ण की। दीर्घायुष्य प्राप्त करने के कारण जगद्गुरू राघवानंद ने अपने तेजस्वी और प्रिय शिष्य रामानंद को श्रीमठ पीठ की पावन पीठ पर अभिषिक्त कर दिया। अपने पहले संबोधन में ही जगदगुरू रामानंदाचार्य ने हिंदू समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं अंधविश्वासों को दूर करने तथा परस्पर आत्मीयता एवं स्नेहपूर्ण व्यवहार के बदौलत धर्म रक्षार्थ विराट संगठित शक्ति खड़ा करने के संकल्प व्यक्त किया। काशी के परम पावन पंचगंगा घाट पर अवस्थित श्रीमठ, आचार्यपाद के द्वारा प्रवाहित श्रीराम प्रपत्ति की पावन धारा के मुख्यकेंद्र के रूप में प्रतिष्ठित होकर उसी ओजस्वी परंपरा का अनवरत प्रवर्तन कर रहा है। आज भी श्रीमठ आचार्यचरण की परिकल्पना के अनुरूप उनके द्वारा प्रज्ज्वलित दीप से जनमानस को आलोकित कर रहा है। यही वह दिव्यस्थल है, जहां विराजमान होकर स्वामीजी ने अपने परमप्रतापी शिष्यों के माध्यम से अपनी अनुग्रहशक्ति का उपयोग किया था।

रामानंदाचार्च पीठ का पवित्र केंद्र सारे देश में फैले रामानंद संप्रदाय का मुख्यालय है। श्रीमठ में अवस्थित रामानंदाचार्च की चरणपादुका दुनियाभर में बिखरे रामानंदी संतों, तपस्वियों एवं अनुयायियों की श्रद्धा का अन्यतम बिंदु है। यह परम सौभाग्य और संतोष का विषय है कि श्रीमठ के वर्तमान पीठासीन आचार्य स्वामी [रामनरेशाचार्यजी](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%A8%E0%A4%B0%E0%A5%87%E0%A4%B6%E0%A4%BE%E0%A4%9A%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%9C%E0%A5%80&action=edit&redlink=1) भी स्वामी रामानंदाचार्च की प्रतिमूर्ति जान पड़ते हैं। उनकी कल्पनाएं, उनका ज्ञान, उनकी वाग्मिता और सबसे अच्छी उनकी उदारता और संयोजन चेतना ऐसी है कि यह विश्वास किया जाता है कि स्वामी रामानंद का व्यक्तित्व कैसा रहा होगा। वर्तमान जगद्गुरू रामानंदाचार्च पद प्रतिष्ठित स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज के सत्प्रयासों का नतीजा है कि श्रीमठ से कभी अलग हो चुकी कबीरदासीय, रविदासीय, रामस्नेही, प्रभृति परंपराएं वैष्णव के सूत्र में बंधकर श्रीमठ से एकरूपता स्थापित कर रही है। कई परंपरावादी मठ मंदिरों की इकाईयां श्रीमठ में विलीन हो रही हैं। तीर्थराज प्रयाग के दारागंज स्थित आद्य जगद्गुरू रामनंदाचार्य का प्राकट्यधाम भी इनकी प्रेरणा से फिर भव्य स्वरूप में प्रकट हुआ है। स्वामी रामानंद को रामोपासना के इतिहास में एक युगप्रवर्तक आचार्य माना जाता है। उन्होंने श्रीसंप्रदाय के विशिष्टाद्वैत दर्शन और प्रपतिसिद्धांत को आधार बनाकर रामावत संप्रदाय का संगठन किया। श्रीवैष्णवों के नारायण मंत्र के स्थान पर रामतारक अथवा षडक्षर राममंत्र को सांप्रदायिक दीक्षा का बीजमंत्र माना. बाह्य सदाचार की अपेक्षा साधना में आंतरिक भाव की शुद्धता पर जोर दिया, छुआछूत, ऊंच-नीच का भाव मिटाकर वैष्णव मात्र में समता का समर्थन किया। नवधा से परा और प्रेमासक्ति को श्रेयकर बताया। साथ-साथ सिद्धांतों के प्रचार में परंपरापोषित संस्कृत भाषा की अपेक्षा हिंदी अथवा जनभाषा को प्रधानता दी। स्वामी रामानंद ने प्रस्थानत्रयी पर विशिष्टाद्वैत सिद्धांतनुगुण स्वतंत्र आनंद भाष्य की रचना की। तत्व एवं आचारबोध की दृष्टि से वैष्णवमताब्ज भास्कर, श्रीरामपटल, श्रीरामार्चनापद्धति, श्रीरामरक्षास्त्रोतम जैसी अनेक कालजयी मौलिक ग्रंथों की रचना की। स्वामी रामानंद के द्वारा दी गई देश-धर्म के प्रति इन अमूल्य सेवाओं ने सभी संप्रदायों के वैष्णवों के हृदय में उनका महत्व स्थापित कर दिया। भारत के सांप्रदायिक इतिहास में परस्पर विरोधी सिद्धांतों तथा साधना-पद्धतियों के अनुयायियों के बीच इतनी लोकप्रियता उनके पूर्व किसी संप्रदाय प्रवर्तक को प्राप्त न हो सकी। महाराष्ट्र के नाथपंथियों ने ज्ञानदेव के पिता विट्ठल पंत के गुरू के रूप में उन्हें पूजा, अद्वैत मतावलंबियों ने ज्योतिर्मठ के ब्रह्मचारी के रूप में उन्हें अपनाया. बाबरीपंथ के संतों ने अपने संप्रदाय के प्रवर्तक मानकर उनकी वंदना की और कबीर के गुरू तो वे थे ही, इसलिे कबीरपंथियों में उनका आदर स्वाभाविक है। स्वामी-रामानंद के व्यक्तित्व की इस व्यपाकता का रहस्य, उनकी उदार एवं सारग्राही प्रवृति और समन्वयकारी विचारधारा में निहित है। निश्चय हीं उनके विराट व्यक्तित्व एवं व्यापक महत्ता के अनुरूप कतिपय आर्षग्रंथ एवं संत-साहित्य में उल्लेखित उनके रामावतार होने का वर्णन अक्षरश: प्रमाणित होता है।

यह तो निश्चित ही है कि स्वामी रामानंद में परिस्थितिजन्य निर्णय लेने की अभूतपूर्व क्षमता थी एवं वे आत्मचिंतन से प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक कसौटी पर कसने में कुशल भी थे। स्वामी रामानन्द ने अपनी तत्त्वग्राही मानवतावादी विचारधारा में मजहबी, वर्गगत अहंकार तथा आचार संहिता की जडत्व में उलझा देने वाले तत्त्वों को स्थान नहीं दिया। वे जीवन का चरम लक्ष्य परम तत्त्व की प्राप्ति मानते हैं। स्वामी रामानंद व्यवहार में भेद- भाव और भिन्नता रहने के कारण सांप्रदायिक कटुता के विरुद्ध थे एवं इसी कटुता को मिटाकर उसके स्थान पर भाई चारे की भावना का प्रसार करना चाहते थे। स्वामी रामानंद ने राम को मानकर उनकी वंदना की है, जिससे यह सिद्ध होता है कि उन्होंने अध्यात्म के इस चरम शिखर की अनुभूति कर ली थी, जहाँ सभी भिन्नता, विरोध- अवरोध तथा समग्र द्वैत- अद्वैत केवल एक में ही प्रतिष्ठित हो जाते हैं। प्रमुख बात यह है कि वे हिंदू- मुसलमान के जातीय और धार्मिक मतों के वैमनस्य को मिटाकर उन्हें उस मानवीय अद्वैत धरातल पर प्रतिष्ठित करने में मानवता और आध्यात्म के एक महान नेता के समान प्रयत्नशील हैं क्योंकि उनका विश्वास था कि “”सत्य के प्रचार से ही वैमनस्य की भावना मिटाई जा सकती है”। इस समस्या के समाधान हेतु, स्वामी रामानन्द ने जो रास्ता अपनाया था, वह वास्तव में लोक मंगलकारी और समयानुकूल था जहां समस्त मनुष्य जाति एक ईश्वर को प्राप्त कर अपने जन्म को कृतार्थ करना चाहती है। अल्लाह और राम की इसी अद्वैत अभेद और अभिन्न भूमिका की अनुमति के माध्यम से उन्होंने हिदूं- मुसलमान दोनों पक्षों को जीवन के गलत पथ पर चलने के लिए वर्जित किया और दोनो पक्षों को अपनी बात समझाते हुए फटकार लगाई ताकि प्रत्येक मनुष्य मनुष्यज्जीवन का महत्त्व समझ सके।

रामानंद ने उदार भक्ति का मार्ग चुना और उनके शिष्यों में [जुलाहा](https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%9C%E0%A5%81%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%B9%E0%A4%BE&action=edit&redlink=1), [चमार](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%9A%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%B0), [जाट](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%9C%E0%A4%BE%E0%A4%9F), [क्षत्रिय](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%AF), आदि और स्त्रियाँ भी थीं। उनके अनुसार भक्ति का द्वार सभी के लिए समान था एवं श्रद्धा पूर्वक ईश्वर स्मरण पर सभी का समानाधिकार है । उन्होंने वैरागी संप्रदाय की स्थापना इसी कारण की। उनके विशाल हृदय उपदेशों के परिणाम स्वरूप जहां धर्म परिवर्तन करके कई व्यक्ति हिंदू धर्म में सम्मिलित हुए वहीं दूसरी ओर भारतीय सामाजिक व्यवस्था एक नये आयाम को प्राप्त करने में समर्थ हुई। स्वाम्मी रामानन्द की विचारधारा के परिणामस्वरूप जहां उनका काव्य एअं विचारधारा एक ओर महानतम व्यक्ति संत [तुलसीदास](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%B2%E0%A4%B8%E0%A5%80%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8) का उपजीव्य स्रोत बना बहीम् दूसरी ओरउनकी विचारधारा काअनुपालन करने वाले प्रमुख व्यक्ति संत [कबीरदास](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%95%E0%A4%AC%E0%A5%80%E0%A4%B0%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8) रहे।

स्वामी रामानंद के श्रीमत का दार्शनिक आधार वास्तव में [विशिष्टाद्वैत](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%9F%E0%A4%BE%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A5%88%E0%A4%A4) मत के पोषक हैं। वे ब्रह्म को चिदचिद्विशिष्ट मानते हैं और मोक्ष का उपाय परमोपास्य की 'प्रपत्ति' है। रामानंद संप्रदाय में निम्नलिखित बातें प्रधान हैं -

* १. द्विभुज श्रीराम परमोपास्य हैं।
* २. 'ओम् रामाय नम:' सांप्रदायिक मंत्र है।
* ३. इस संप्रदाय का नाम श्री संप्रदाय या 'रामानंद संप्रदाय' या 'वैरागी संप्रदाय' है।
* ४. इस संप्रदाय में आचार पर अधिक बल नहीं दिया जाता। कर्मकांड का महत्व यहाँ बहुत कम है।
* ५. इस संप्रदाय में शुक्लश्री, बिंदुश्री, रक्तश्री, लस्करी आदि अनेक प्रकार के तिलक प्रचलित हैं।

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि रामानन्द सम्प्रदाय जो श्री संप्रदाय के नाम से भी जाना जाता है उसमें 'श्री' शब्द का अर्थ [लक्ष्मी](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B2%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A5%80) के स्थान पर '[सीता](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B8%E0%A5%80%E0%A4%A4%E0%A4%BE)' किया जाता है और इस संप्रदाय का दार्शनिक मत [विशिष्टाद्वैत](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%9F%E0%A4%BE%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A5%88%E0%A4%A4) ही माना जाता है, जैसा ऊपर उल्लिखित हो चुका है।यहां विशिष्टाद्वैत शब्द का अर्थ स्पष्ट करना एक आवश्यकता बन जाती है।विशिष्टाद्वैत शब्द का अर्थ इस प्रकार किया गया है - विशिष्टं चा विशिष्टं च विशिष्टे, विशिष्टयोरद्वैते विशिष्टाद्वैतम् अर्थात् सूक्ष्म चिदचित् विशिष्ट अथवा कारण ब्रह्म और स्थूल चिदचिद् विशिष्ट अथवा कार्य ब्रह्म में अभिन्नता स्थापित करना ही विशिष्टाद्वैत का उद्देश्य है। रामानंद संप्रदाय में [राम](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE) को ही [ब्रह्म](https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AC%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%B9%E0%A5%8D%E0%A4%AE) कहा गया है और 'सीताराम' आराध्य माने गए हैं। ब्रह्म राम विश्व की उत्पत्ति, रक्षा और इसका लय करता है। उसके प्रकाश से सूर्य और चंद्रमा संसार को प्रकाशित करते हैं। जो वायु को चलायमान करता है, जो पृथ्वी को स्थिर रखता है, वह ज्ञानस्वरूप, साक्षी, अनेक शुभ गुणों से युक्त, अविनाशी एवं विश्वभर्ता ईश्वर ही ब्रह्म है। यह ब्रह्म नित्य है; ब्रह्मादि का विधायक, वेदों का उपदेष्टा, स्वयं सर्वज्ञ है। सदयोगियों की रखा करता है, चेतन को भी चेतनता प्रदान करता है, स्वतंत्र है। इस ब्रह्म पद से श्री रामचंद्र का ही बोध होता है। रामानंद उसी राम के सस्मित मुखकमल का स्मरण करते हैं जो जानकी के कटाक्षों से अवलोकित, भक्तों के मनोवांछित धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को देने के लिए कल्पतरु के समान है।

सीतापति भगवान् राम समस्त गुणों के एकमात्र आकर, सत्यस्वरूप, आनंदस्वरूप तथा चित्स्वरूप हैं। स्वयं विष्णु ही राम के रूप में अवतीर्ण हुए थे। वे लोकोत्तर वलशाली, अद्भुत दिव्य धनुष और बाणों से पूजित तथा आजानुबाहु हैं। परम पुरुषोत्तम राम सीता और लक्ष्मण के साथ नित्य ही सुशोभित रहते हैं। भक्त का विश्वास है कि नरशार्दूल भगवान् राम के प्रात: निद्रात्याग करन मात्र से सारा संसार जाग उठेगा। भगवान् ही जीवों के स्वामी हैं। एकमात्र वही शेषी हैं। जीव उनका शेष है। भगवान् राम ही जीवों के परम प्राप्य हैं। वही एकमात्र उपाय भी हैं। भगवान् राम के पार्षदों में लक्ष्मण परम प्राप्य हैं। वही एकमात्र उपाय भी हैं। भगवान् राम के पार्षदों में लक्ष्मण परम प्रिय हैं। अनुमान भी उनके दूसरे पार्षद हैं। स्वामी जी ने भगवान् राम के अर्चावतार अथवा प्रतिमावतार के चारों स्वयं व्यक्त, दैव, सैद्ध और मानुष की पूजा षोडशोपचार से करने के लिए आदेश दिया है। रामानंद जी के मत से सीता के द्वारा ही राम की प्राप्ति होती है। महारानी सीता पुरुषकारभूता हैं और वही उपाय भी हैं।

रामानंद ने जीव की साधारण ढंग से इस प्रकार व्याख्या की है - जो सदैव एक स्वरूप में स्थित है, जो ईश्वर की अपेक्षा अज्ञ, चेतन, सर्वदा पराधीन (भगवदधीन), सूक्ष्म से सूक्ष्म, बद्धादि भेदों से भिन्न भिन्न शरीरों में भिन्न भिन्न प्रकार का होकर भिन्न है। भगवान् से परिव्याप्त शरीर में जो रहता है, स्वकर्मानुसार फल भोगनेवाला, भगवन् ही जिसके सर्वदा सहायक हैं, अपने को कर्ता, भोक्ता समझने का जिसे अभिमान है, तत्व के जिज्ञासुओं द्वारा जानने योग्य है, श्रेष्ठ विद्वान् उसी को जीव कहते हैं। यह जीव ज्ञानस्वरूप, आनंदस्वरूप तथा ज्ञान और सुख आदि गुणोंवाला, अणु परिमाणवाला, देहेंद्रियादि से भी अपूर्व, परमात्मा का प्रिय, नित्य एवं स्वप्रकाश है। भगवान् शेषी और जीव उनका शेष है। भगवान् ही जीवों के स्वामी हैं। जीव परतंत्र है। अत: भगवान् की निर्हेतुक कृपा के बिना जीव को मोक्ष नहीं मिल सकता।रामानंद ने भगवान् और जीव में पिता-पुत्र-संबंध, रक्ष्य-रक्षक-संबंध, सेव्य-सेवक-संबंध, आत्मा-आत्मीयत्व-संबंध तथा भोग्य-भोक्तृत्व आदि नव प्रकार के संबंधों को स्वीकार किया है। जीवों के दो भेद हैं - बद्ध और मुक्त।

अनादि कर्मों की राशि से अनेक प्रकार के शरीर का अभिमानी जीवबद्ध कहा गया है। बद्ध जीव दो प्रकार के हैं - १. मुमुक्षु, २. बुभुक्षु। भगवान् की निर्हेतुक कृपा से अविद्यादि दुष्ट कर्मों की वासना की रुचि की प्रवृत्ति के संबंध से छूटने का प्रयत्न करनेवाले जीवों को मुमुक्षु कहते हैं। इसके विरुद्ध सांसारिक भोग की कामनावाले जीव बुभुक्षु कहलाते हैं।

मुमुक्षु जीव भी दो प्रकार के हैं - १. शुद्ध भक्त, २. चेतनांतर साधन। ज्ञानादि साधनहीन, स्मृति भक्ति में निष्ठित वेदोक्त वर्णाश्रम कर्म करनेवाले और उपासना निरत भक्त शुद्ध भक्त कहलाते हैं। स्वानुष्ठित कर्म विज्ञानादि समूह को ही प्रधान साधन मानकर किसी उत्तम संबंध विशेष को प्राप्त करके सदा मोक्ष में निश्चय वाले जीव चेतनांतर साधन कहलाते हैं।

मोक्षपरायण जीव भी दो प्रकार के हैं - १. प्रपन्न, २. पुरुषकारनिष्ठ। अन्य सभी को छोड़कर परम कृपालु, समर्थ, अविनाशी श्रीराम को ही प्राप्य और उनको ही उपाय समझकर जो जीव संस्थित हैं, उन्हें प्रपन्न कहते हैं। श्रीराम की स्वतंत्रता का विचार करके कुछ संकुचित होकर, परम कृपालु आचार्य को ही उपाय मानकर स्थित रहनेवाले जीव पुरुषकारनिष्ठ कहलाते हैं।

प्रपन्न जीव भी दो प्रकार के होते हैं - १. दृप्त, २. आर्त। शरीरस्थिति पर्यत स्वकर्मानुसार प्राप्त दु:खादि का भोग करते हुए शरीर के अंत में मोक्ष सिद्धि का निश्चय करके महाबोध एवं अत्यंत विश्वासयुक्त रहनेवाले जीवदृप्त कहलाते हैं। संसृति को उसी क्षण न सहन करतेश् हुए जो भगवात् प्राप्ति में अत्यंत शीघ्रता चाहते हैं वे आर्त जीव है।

पुरुषकारनिष्ठ जीव भी दो प्रकार के हैं - १. आचार्य-कृपा-मात्र प्रपन्न, २. महापुरुष-सेवातिरेक-प्रपन्न। अंत में रामानंद ने बद्ध जीवों के संबंध में कहा है कि शुद्ध भक्त वही है जो भगवान् के यश के श्रवण, कीर्तनादि में ही निष्ठा रखते हैं।

ये जीव दो प्रकार के हैं १. नित्य, २. कादाचित्क। नित्य जीव गर्भ जन्मादि दु:खों के अनुभव करनेवाले कहलाते हैं, जैसे - हनुमान। नित्य जीव भी दो प्रकार के हैं - १. परिजन, २. परिच्छद। हनुमान परिजन और किरीट आदि परिच्छेद की परिभाषा में आते हैं। इसी प्रकार कादाचित्क जीव के भी दो भेद किए गए हैं - १. भागवत, २. केवल। जो जीव भगवत्परायण हैं उन्हें भागवत कहते हैं। भागवत जीव के भी दो भेद हैं - १. भगवत्परायण होकर नित्य उनका ही ध्यान करनेवाले जीव। २. भगवद्-गुणानुसंधान-परायण के साथ कैकयेपरायण होनेवाले जीव। इसी प्रकार केवल जीव के भी दो भेद बतलाए गए हैं - १. दु:खभावनैकपरायण, २. अनुभूति परायण।

रामानंद के मत के अनुसार प्रकृति के संबंध में उनकी वही धारणा है जो सांख्य में वर्णित है। तत्वविद्, विकाररहित, संपूर्ण विश्व का कारण, एक होकर भी अनेक प्रकार से शोभित, शुक्लादि भेद से अनेक वर्णोवाली, सत्व, रज, तम आदि गुणों को प्रश्रय देनेवाली, अव्यक्त प्रधान आदि शब्दों से अभिहित, स्वतंत्र व्यापारहीन, ईश्वराधीन रहनेवाली और महत्तत्व एवं अहंकार आदि को उत्पन्न करनेवाली सत्ता को ही प्रकृति कहते हैं। रामानंद जी ने इन विशेषणों का विवेचन नहीं किया है, केवल संकेत मात्र किया है।

रामानंद के मत से भगवान् की कृपा से सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर साकेत लोक को प्राप्त करके परब्रह्म से सायुज्य की प्राप्ति करना ही मोक्ष कहलाता है। रामानंद संप्रदाय में भक्त, श्री राम की कृपा से सायुज्य मुक्ति प्राप्त करता है और उनके साथ नित्य क्रीड़ा करता है।

रामानंद के मत से जीव सुषुम्ना, अर्चिमार्ग, अर्हमार्ग, उत्तरायण, संवत्सर, सूर्य, चंद्र, और विद्युत् आदि मार्गों से होता हुआ दिव्य लोक साकेत में पहुँचकर विश्राम करता है। यही भगवान् राम का लोक है, जहाँ करोड़ों सूर्य के प्रकाश से युक्त हेम का सिंहासन है, जहाँ स भक्त फिर इस संसार में नहीं लौटता। इस साकेत लोक के चारों ओर विरजा नदी बहती रहती है जिसका जल अत्यंत निर्मल है।